जीवन के उच्चतम आदर्श हैं। नारी इस आदर्श को प्राप्त कर चुकी है। पुरुष धर्म और अध्यात्म और ऋषियों का आश्रय लेकर उस लक्ष्य पर पहुँचने के लिए सदियों से जोर मार रहा है, पर सफल नहीं हो सका। मैं कहता हूँ, उसका सारा अध्यात्म और योग एक तरफ और नारियों का त्याग एक तरफ।''[81]

प्रेमाश्रम

अंग्रेजी साम्राज्यवाद और ज़मींदारों के आपसी संबन्ध समझे बिना 'प्रेमाश्रम' की रचना न हो सकती थी। इस समझ के बिना प्रेमचन्द ज्ञानशंकर और गायत्री, ज्वाला सिंह और गौस खाँ, मनोहर और बिलासी, बलराज और कादिर खाँ, प्रेमशंकर और मायाशंकर, विद्यावती और श्रद्धा, इन तरह–तरह के पात्रों को एक जगह न तो इकट्ठा कर पाते, न उनके जीवन–सूत्रों को एक–दूसरे से जोड़ पाते। "'प्रेमाश्रम' हिन्दी में अपने विषय का सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है। 'प्रेमाश्रम' में वे उन किसानों की ज़िन्दगी की तस्वीर खींचना चाहते थे जिन्हें साहित्य के लक्षण ग्रन्थों में जगह न मिली थी। प्रेमचन्द ने बेगार करने वाले, हल जोतने वाले, प्लेग और सरकार का मुकाबला करने वाले किसानों को नायक बना दिया। मनोहर, बिलासी, बलराज, कादिर, दुखरन आदि उपन्यास के नायक हैं। ये नए तरह के नायक हैं– गुण और अवगुण, दोनों से विभूषित। लखनपुर का गाँव–संक्षेप में इस उपन्यास का नायक है। ज्ञानशंकर, गौस खाँ, कचहरी–कानून और पुलिस की जमात खलनायक है।''[82] प्रेमचन्द ने दिखलाया है कि हिन्दुस्तान की साधारण जनता में साहस, धीरता और मनोबल के कौन से स्रोत छिपे पड़े हैं। ''प्रेमचन्द के किसान देवता नहीं हैं, वे मनुष्य हैं। उनमें कमजोरियाँ है; वे उनसे लड़ते हैं। कभी जीतते हैं, कभी हारते हैं। प्रेमचन्द ने चरित्र का उत्थान पतन दिखाने में, एक साहसी लेकिन अति व्यथित किसान का हृदय पढ़ने में अपनी ज्वलन्त प्रतिभा का परिचय दिया है।''[83] *''तुलसीदास ने भारतीय जनता के शौर्य का चित्रण किया था– पौराणिक गाथाओं के पात्रों द्वारा। प्रेमचन्द तुलसीदास के त्याग, सहृदयता, और शूरता की परम्परा के उत्तराधिकारी हैं।''*[84]

'प्रेमाश्रम' की सभी स्त्रियाँ–बिलासी, विद्यावती, श्रद्धा, और शीलमणी संघर्ष करती हैं–सामाजिक व्यवस्था के खिलाफ या पुरूषवाद के खिलाफ। ज़मींदार की पत्नी होने के बावजूद पति (ज्ञानशंकर) के खिलाफ विद्या की घृणा अपने जमाने में उठ रहे नारी आन्दोलन की हवाओं का पता देती है। 'बिलासी' एक ग्रामीण निम्नवर्गीय कृषक–पत्नी का प्रतिनिधित्व करती है। बिलासी का चरित्र 'गोदान के धनिया' से मिलता है। किन्तु मनोहर का चरित्र 'होरी' के चरित्र के ठीक विपरीत क्रान्तिकारी है।

मनोहर

ज़मींदारी और सामंती व्यवस्था में पिसकर बेइंतहा बरबाद होते हुए किसान–जीवन पर प्रेमचन्द का पहला उपन्यास है– 'प्रेमाश्रम', उसमें 'मनोहर' एक ठेठ स्वाभिमानी, साहसी किसान है। उसके व्यक्तित्व में औपनिवेशिक भारत में जीते किसान की सच्ची झलक मिलती है। वह लाला ज्ञानशंकर की बीस बीघा ज़मीन जोतता है और पचास रूपये लगान के रूप में देता है। 'मनोहर' जैसे गाँव में अनेक ऐसे किसान हैं, जो बेगार, लगान और प्राकृतिक विपदाओं के कारण किसान से मजदूर हो जाते हैं। 'प्रेमाश्रम' में एक नई चेतना का उदय होता है। किसान जमींदारों और सरकारी अधिकारियों के शोषण से न केवल नाराज हैं अपितु वे अपना आक्रोश भी प्रकट करते हैं। विद्रोही कृषकों का प्रतिनिधित्व करता है– मनोहर। ''1921 के आस–पास जब यह ज़मींदारी व्यवस्था का शोषणतन्त्र खोद डालने वाला उपन्यास रचा गया, तब राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर घटनाएँ तेजी से करवट ले रही थीं। उत्तर–प्रदेश और बिहार दोनों प्रान्तों में अंग्रेजों की मालगुजारी व्यवस्था और भारतीय जमींदारों की सामंती सत्ता के खिलाफ़ तीव्र विद्रोह आरम्भ हो चुके थे। उधर 1917 ई0 में रूस की अक्टूबर क्रांति का सबसे बड़ा नारा किसान और मज़दूर थे; जो खेतों में हँसिया और कुदाल चलाने वाली हैसियत से बहुत ऊपर उठकर विश्व के सबसे बड़े देश की सत्ता के कर्णदार घोषित

किये गये। उधर जर्मनी के युगान्तरकारी दार्शनिक कार्लमार्क्स ने अपने 'कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणा पत्र' में तत्कालीन पूँजीवादी विश्व के समक्ष यह अपराजेय उद्घोष ही कर डाला *''दुनिया के मज़दूरों एक हो''*[85] यह बहुत–बहुत स्वाभाविक है कि अपने समकाल की घटनाओं के प्रति चिर–जागरूक रहने वाले और उसके प्रभाव के कारण अपनी कलम में विवेकपूर्ण परिवर्तन लाने वाले प्रेमचंद इन वैश्विक घटनाओं से बहुत गहरे प्रभावित होकर मनोहर, बलराज जैसे– चरित्र का सृजन किये हों।

मनोहर, ज़मींदार, पटवारी, तहसीलदार, कारिन्दा, अंग्रेजी हुकूमत के अधिकारी, उनके कर्मचारी, चपरासी, आदि का खुलकर विरोध करता है। ज़मींदार के चपरासी को घी देने से वह साफ–साफ इंकार कर जाता है। चपरासी गिरधर उस पर धौंस जमाते हुए कहता है कि जब ज़मींदार की ज़मीन जोतते हो तो उसका हुक्म भी मानना होगा। इस पर मनोहर का आक्रोश फूट पड़ता है। वह कहता है– ''ज़मीन कोई खैरात जोतते हैं। उसका लगान देते हैं एक किस्त भी बाकी पड़ जाय तो नालिश होती है।.. न कारिन्दा कोई काटू है न ज़मींदार कोई हौवा है। यहाँ कोई दबैल नहीं हैं। जब कौड़ी–कौड़ी लगान चुकाते हैं तो धौंस क्यों सहें?''[86] प्रेमचन्द आगे लिखते हैं– ''मनुष्य जिस काम को हृदय से बुरा नहीं समझता, उसके कुपरिणाम का भय एक गौरवपूर्ण धैर्य की शरण लिया करता है। मनोहर अब इस विचार से अपने को शान्ति देने लगा। मैं बिगड़ जाऊँगा तो बला से, पर किसी की धौंस तो न सहूँगा, किसी के सामने सिर तो नीचा नहीं करता। ज़मींदार भी देख लें कि गाँव में सबके सब भाँड ही नहीं हैं।''[87] मनोहर न्यायवादी है, इसलिए खुद्दार भी है, इरादतन किसी का अनभल नहीं सोचता इसलिए बेवजह किसी से नहीं डरता है, उसमें विनम्रता है, पर कायरता नहीं। वह इंसानियत के आगे झुक सकता है, परन्तु अनीति के सामने चट्टान की तरह अकड़ कर खड़ा हो जाता है। **मनोहर, सहनशील 'होरी' का क्रान्तिकारी भाई (सगा) है।** *''होरी' हिन्दुस्तान का सच है, मनोहर हिन्दुस्तान की जरूरत। होरी अतीत है और मनोहर वर्तमान। हम होरी की बेपनाह इज्जत करते हैं, किन्तु हमें मनोहर चाहिए–होरी नहीं। ''होरी' हिन्दुस्तानी*

किसान का भविष्य नहीं है, यदि कोई है तो शायद 'मनोहर' है। 'होरी' भारतीय साहित्य का सबसे अमिट और अमर चरित्र है; किन्तु मनोहर वह आवाज है जिसका विस्तार होना अभी बहुत दूर तक बाकी है।'[88] प्रेमचंद के शब्दों में मनोहर का जरा उबाल खाता हुआ आत्म–सम्मान देखिए– ''जिस दिन से वह ज्ञानशंकर की कठोर बातें सुनकर लौटा था, उसी दिन से विकृत भावनाएँ उसके हृदय और मस्तिष्क में गूँजती रहती थीं। एक दीन मर्माहत पक्षी था, जो घावों से तड़प रहा था। वह अपशब्द उसे एक क्षण भी नहीं भूलते थे, वह ईंट का जवाब पत्थर से देना चाहता था। वह जानता था कि सबलों से बैर बढ़ाने में मेरा ही सर्वनाश होगा, किन्तु उस समय उसकी अवस्था उस मनुष्य की सी हो रही थी, जिसके झोपड़े में आग लगी हो और वह उसको बुझाने में असमर्थ होकर शेष भागों में भी आग लगा दे।''[89]

मनोहर का स्वाभिमान समझौता करना, झुक जाना या गूँगा बन जाना नहीं जानता। उसे अपने खोने, मिटने या लड़ने का गम नहीं, गम है तो नौजवान बेटे बलराज का, चिन्ता है तो सबको सहने की आदत पालने वाली पत्नी बिलासी की। जब उसकी खेती पर बेदखली का साया मँडराने लगता है, तो वह सीधे–सीधे बतला देता है– *''बेदखली की धमकी दूसरों को दें। यहाँ हमारे खेत के मेड़ों पर कोई आया तो उसके बाल–बच्चे उसके नाम को रोएँगे।'*[90]

ज़मींदार का कारिंदा गौस खाँ, मनोहर की पत्नी बिलासी का अपमान करता है। मनोहर इस अपमान को सहन नहीं कर पाता है। वह गौस खाँ की हत्या कर देता है। उसे जेल की सजा होती है। लाचार और विवश मनोहर को भी आत्महत्या करनी पड़ती है ''अपने मरजाद की रक्षा करना मरदों का काम है। ऐसे अत्याचारों का हम और क्या जवाब दे सकते हैं? बेइज्जत होकर जीने से मर जाना अच्छा है।''[91] यह मरजाद किसान के जीने की प्रेरणा है; एक तरह से आत्म–सम्मान का रक्षाकवच, जिसके बिना जीवन का कोई अर्थ नहीं। किसान भूख–सह लेगा, विपन्नता बर्दाश्त कर लेगा, गुमनामी में सारी उम्र काट लेगा, परन्तु मरजाद को

जीते जी नहीं छोड़ सकता। यह मरजाद उसका अपना मानवीय संस्कार है, उसका जीवन–मूल्य है– जिसके दम पर वह अपने इंसान होने पर गर्व कर सकता है। 'मरजाद' ही मनोहर को होरी से जोड़ती है। *1936 के सहनशील 'होरी' व 1921 के विद्रोही 'मनोहर' को मिलाकर जिस मानव–मूल्यों से सम्पन्न किसान व्यक्तित्व का निर्माण होगा, वह दुनिया की किसी भी बड़ी से बड़ी ताकत के खिलाफ संघर्ष करता रहेगा, और बाज़ारवाद, मायावी पूँजीवाद और वैश्वीकरण के चक्र में बुरी तरह उलझे हुए भारतीय किसान की आत्महत्या को रोक सकेगा।*

कादिर गाँव वालों से कहता है– 'हम सब–के–सब कायर हैं, वही एक मर्द है।'[92]

बलराज

'प्रेमाश्रम' उपन्यास का नवयुवक चरित्र–बलराज के व्यक्तित्व का चित्र प्रेमचंद ने कुछ इस प्रकार प्रस्तुत किया है– ''उसका शरीर खूब गठीला, हृष्ट–पुष्ट था, छाती चौड़ी और भरी हुई थी। आँखों से तेज झलक रहा था। उसके गले में सोने का यन्त्र था और दाहिनी बाँह में चाँदी का एक अनन्त। यह मनोहर का पुत्र बलराज था।''[93] सपूत बाप का सपूत बेटा।..... 'प्रेमचंद ने बलराज को हिन्दुस्तान के किसान–नौजवानों का प्रतिनिधि बनाया है। वह कसरत–कुश्ती का शौक़ीन है, गाना–बजाना, दोस्तों में गपशप करना उसे पसंद है। दुनिया का अनुभव कम है; इसलिए उतावलापन उसमें ज़्यादा है। वह एक नए आदर्श से प्रभावित है।, जिसके अनुसार हर इंसान को इंसान की तरह रहने का हक मिलना चाहिए। वह किसी भी तरह का अन्याय बर्दाश्त करने के लिए तैयार नहीं है। वह उस लोहे की तरह है जो आग में तपकर इस्पात बनने की क्षमता रखता है।''[94] बलराज अपने पिता मनोहर से एक कदम आगे है। उसके पिता मनोहर के मन में अभी भी ज़मींदार का भय है। फलतः वह नहीं चाहता कि बलराज ज़मींदार के विरोध में मुँह खोले, किन्तु बलराज को तनिक भी ज़मींदार की परवाह नहीं है वह कहता है– ''कोई हमसे क्यों

घी माँगे? किसी का दिया खाते हैं कि किसी के घर माँगने जाते हैं? अपना तो एक पैसा नहीं छोड़ते तो हम क्यों धौंस सहें? न हुआ मैं, नहीं तो दिखा देता। क्या हमको भी दुर्जन समझ लिया है।''[95]..... ''सुन लेगा तो क्या किसी से छिपा के कहते हैं। जिसे बहुत घमण्ड हो आकर देख ले। एक–एक का सिर तोड़ के रख दें। यही न होगा कैद होकर चला जाऊँगा। इससे कौन डरता है? महात्मा गाँधी भी तो कैद हो आये हैं।''[96] बलराज एक साहसी, निर्भीक, निडर, एंव स्वाभिमानी युवक है। ध्यान रहे कि वह महात्मा गांधी के जेल जाने से प्रेरणा लेता है न कि उनके अहिंसा से। जब गौस खाँ बेगार में दूध लेने के लिए कहता है– ''क्यों मनोहर, तुम्हारी भैंसें तो दुधार हैं? मनोहर ने अभी जवाब न दिया था कि बलराज बोल उठा– मेरी भैंसें बहुत दुधार हैं, मन भर दूध देती हैं, लेकिन बेगार के नाम से छँटाक–भर भी न देंगी।''[97]

''बलराज मार्क्स के वर्ग–संघर्ष से प्रभावित दिख पड़ता है। मार्क्स की तरह उसकी मान्यता है कि अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए एवं प्राप्त अधिकारों की रक्षा के लिए रक्तिम क्रान्ति भी करनी पड़े तो वह संगत है।''[98] बलराज पढ़ना–लिखना भी सीखा है, अखबारों से बदलती हुई दुनिया का हाल भी वह जानता है। वह कहता है– *''तुम लोग तो ऐसी हँसी उड़ाते हो, मानो कास्तकार कुछ होता ही नहीं; वह ज़मीदार की बेगार ही भरने के लिए बनाया गया है; लेकिन मेरे पास जो पत्र आता है, उसमें लिखा है कि रूस देश में कास्तकारों ही का राज है, वह जो चाहते हैं करते हैं। उसी के पास कोई और देश बलगारी है। वहाँ अभी हाल की बात है, कास्तकारों ने राजा को गद्दी से उतार दिया है और अब किसानों और मजूरों की पंचायत राज करती है।'*[99] बलराज रूसी क्रान्ति से प्रभावित है, महज छोटे कर्मचारियों और कारिंदों को दोषी न ठहराकर कहता है– ''यह सब मिली भगत है।''[100] वह नई पीढ़ी का क्रान्तिकारी नौजवान है।

बलराज दुनिया के तमाम मेहनत करने वालों को अपना भाई समझता है।

इसलिए वह खुद हिन्दुस्तान के ग़रीब किसानों और खेत–मजदूरों के लिए लड़ने–मरने के लिए तैयार रहता है। बलराज जब हलवाहा रंगी चमार के साथ खाना खाने चौके पर बैठता है तो ''बिलासी ने जौ की मोटी–मोटी रोटियाँ, बथुआ का साग और अरहर की दाल तीनों थालियों में परस दी। तब एक फूल के कटोरे में दूध लाकर बलराज के सामने रख दिया। बलराज–क्या और दूध नहीं है? बिलासी–दूध कहाँ है, बेगार में नहीं चला गया? बलराज– अच्छा, यह कटोरा रंगी के सामने रख दो। बिलासी– तुम खा लो, रंगी एक दिन दूध न खायेगा तो दुबला न हो जायेगा। बलराज बेगार का हाल सुनकर क्रोध से आग हो रहा था। कटोरे को उठाकर आँगन की ओर जोर से फेंक दिया। बिलासी–राम–राम, ऐसा सुन्दर कटोरा चूर कर दिया। यह किस बात पर कटोरे को पटक दिया? बलराज–इसीलिए कि जो हमसे अधिक काम करता है उसे हमसे अधिक खाना चाहिए। हमने तुमसे बार–बार कह दिया है कि रसोई में जो कुछ थोड़ा बहुत हो, वह सबके सामने आना चाहिए। अच्छा खाँय तो सब खाँय, बुरा खाँय, तो सब खाँय, लेकिन तुम्हें न जाने क्यों यह बात भूल जाती है, अब याद रहेगी। रंगी कोई बेगार का आदमी नहीं है, घर का आदमी है। ऐसा दूध–घी खाने पर लानत है।''[101]

समाज में अत्याचार, अन्याय और शोषण–चक्र को देखकर बलराज की आत्मा धिक्कार उठती है। वह रंगी से कहता है– ''क्या जाने क्यों रंगी, जब से दुनिया का थोड़ा–बहुत हाल जानने लगा हूँ मुझसे अन्याय नहीं देखा जाता। जब किसी जबरे को किसी गरीब का गला दबाते देखता हूँ तो मेरे बदन में आग सी लग जाती है। यही जी चाहता है कि चाहे अपनी जान रहे या जाय इस जबरे का सिर नीचा कर दूँ।''[102]..... ''यहाँ मर्द हैं, सजा से नहीं डरते। कोई चोरी नहीं कि है, डाका नहीं मारा है, सच्ची बात के पीछे सजा नहीं, गला कट जाय तब भी डरने वाले नहीं हैं।''[103]

ज़मींदार, पटवारी, तहसीलदार, कारिंदा, अंग्रेज अधिकारियों तथा उनके

चपरासी आदि के अत्याचारों को देखकर उसकी आत्मा कराह उठती है। समाज को उनसे बचाने के लिए वह उनकी हत्या करना चाहता है।

प्रेमशंकर

प्रेमशंकर 'प्रेमाश्रम' उपन्यास का आदर्श पात्र है। वह सन् 1922 के शिक्षित मध्यवर्गीय असहयोगी आन्दोलन का एक टिपिकल प्रतिनिधि है। देश–भक्ति के द्रोह से बचने के लिए अमेरिका गया। वहाँ पर सब तरह के कार्य करके शिक्षा प्राप्त की। वहाँ से लौटा भी तो सादगी और सदाचार में रंग कर। अपना कार्य स्वयं करता है। ज़मींदारी को बुद्धिहीनता का कारण समझता है किसानों के साथ रहता है। स्वयं जेल जाता है, जमानत अस्वीकार करता है, किसानों की पैरवी करता है। उनके दुःखों को दूर करने का प्रयत्न करता है। ''मेरा विचार भी सरल जीवन व्यतीत करने का है। हाँ, यथासाध्य कृषि की उन्नति करना चाहता हूँ।... हमें अब संगठन की, परस्पर प्रेम व्यवहार की और सामाजिक अन्याय को मिटाने की जरूरत है। हमारी आर्थिक दशा भी खराब हो रही है। मेरा विचार कृषि विधान में संशोधन करने का है। इसलिए मैंने अमेरिका में कृषि शास्त्र का अध्ययन किया है।.... किसानों के साथ रहकर मैं उनकी जितनी सेवा कर सकता हूँ, अलग रहकर नहीं कर सकता।''[104] वह किसानों व पीड़ित जनता से सच्ची सहानुभूति रखता है और ज्वाला सिंह से कहता है– *''जमीन उसकी है, जो उसे जोते।..... मुझे लखनपुर के ही नहीं, सारे देश के कृषकों से सहानुभूति है।''*[105] ज़मींदारी प्रथा के दुष्परिणामों की ओर संकेत करते हुए, वह कहता है– ''इस प्रथा के कारण देश की कितनी आत्मिक और नैतिक अवनति हो रही है, इसका अनुमान नहीं किया जा सकता। हमारे समाज का वह भाग जो बल, बुद्धि विद्या में सर्वोपरि है, जो हृदय और मस्तिष्क के गुणों से अलंकृत है, केवल इसी प्रथा के वश आलस्य, विलास और अविचार के बन्धनों में जकड़ा हुआ है।''[106] प्रेमशंकर के व्यक्तित्व में वे सभी गुण हैं जो एक अच्छे मनुष्य में होने चाहिए। उसमें करूणा है। प्रेम है। सच्चाई है। निःस्वार्थ

सेवा–भावना है। देश–भक्ति है। अन्याय, जुल्म, दमन के खिलाफ क्रोध भी है। उसके चरित्र में अपने उद्देश्य प्राप्ति के लिए पर्याप्त मात्रा में नैतिक बल भी है। ''प्रेमशंकर साहस और जीवट के आदमी थे,..... संसार में सफलता का सबसे जागता हुआ मंत्र अपना उद्योग, अध्यवसाय और दृढ़ता है।.... उनका साहस अदम्य और उद्योग अविश्रान्त था। उनका धैर्य और परिश्रम देखकर निर्बल हृदय वाले भी प्रोत्साहित हो जाते थे।.. मान रक्षा हमारा धर्म है।''[107] प्रेमशंकर, प्रेमचन्द का ही प्रतिरूप है और उसकी असंगतियां प्रेमचन्द की अपनी असंगतियां है। साम्राज्यवादी दासता और ज़मींदारी शोषण के खिलाफ देश की उस तत्कालीन जागृति में प्रेमशंकर का भी हाथ अवश्य था। प्रेमशंकर के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर डॉ. इर्फान अली कहते हैं– ''अब मैं भी प्रेमशंकर के जीवन को अपना आदर्श बनाऊगाँ, संतोष और सेवा के सन्मार्ग पर चलूँगा।''[108]

जटाशंकर

'प्रेमाश्रम' उपन्यास के प्रमुख पात्रों–ज्ञानशंकर एंव प्रेमशंकर के पिता हैं लाला जटा शंकर। ''बड़े लाला साहब को अपनी भागवत और गीता से परमानुराग था।... साधु–सत्कार और अतिथि–सेवा में उन्हें हार्दिक आनन्द होता था। लाला जटाशंकर के एक छोटे भाई–प्रभाशंकर थे। दोनों भाईयों में इतना प्रेम था कि उनके बीच में कभी कटुवाक्यों की नौबत न आयी थी। दोनों भाईयों की प्रतिज्ञा थी कि चाहे कुछ भी क्यों न हो, कचहरी का मुँह न देखेंगे।... दोनों भाई नगर में राम–लखन की जोड़ी कहलाते थे। हमारे प्रेम और एकता की सारे नगर में उपमा दी जाती थी।''[109] जटाशंकर की उदारता प्रभाशंकर के शब्दों में– ''सारे नगर में उनकी उदारता की धूम थी, बड़े–बड़े उनके सामने सिर झुका लेते थे, ऐसे प्रतिभाशाली पुरूष की बरसी भी यथा योग्य होनी चाहिए।, यही हमारी श्रद्धा और प्रेम का अन्तिम प्रमाण है।''[110]

माया शंकर

मायाशंकर, ज्ञानशंकर का पुत्र है। उसका व्यक्तित्व प्रेमचन्द के शब्दों में

''मुख पर एक विलक्षण गम्भीरता और विचारशीलता झलक रही थी।.... मायाशंकर की विचारशीलता, सच्चरित्रता, बुद्धिमत्ता आदि अनेक गुण उसे (गायत्री) याद आने लगे। उससे अच्छे उत्तराधिकारी की वह कल्पना भी न कर सकती थी।''[111] प्रेमशंकर के शब्दों में– ''तुम्हारे हृदय में दया और विवेक है और मुझे विश्वास है कि तुम्हारा जीवन परोपकारी होगा।''[112] माया कहता है– *''मैं चाहता हूँ कि मेरा वज़ीफा गरीब लड़कों की सहायता में खर्च किया जाय।..... प्रेमशंकर पुलकित होकर बोले–बेटा, तुम्हारी उदारता धन्य है, तुम देवात्मा हो, कितना देवदुर्लभ त्याग है! कितना संतोष! ईश्वर तुम्हारे इन पवित्र भावों को सुदृढ़ करें।''*[113] तिलकोत्सव के शुभ अवसर पर मायाशंकर के भाव अमृतवाणी के रूप में कुछ इस प्रकार अभिव्यक्त हुए हैं– *''महोदय ने कहा कि ताल्लुकेदार अपनी प्रजा का मित्र, गुरू और सहायक है। मैं बड़ी विनय के साथ निवेदन करूँगा कि वह इतना ही नहीं कुछ और भी है, वह अपने प्रजा का सेवक भी है।... मैं अपनी प्रजा को अपने अधिकारों के बन्धन से मुक्त करता हूँ। वह न मेरे आसामी हैं, न मैं उनका ताल्लुकेदार हूँ। वह सब सज्जन मेरे मित्र हैं, मेरे भाई हैं, आज से वह अपनी जोत के स्वयं जमींदार हैं.... भूमि या तो ईश्वर की हैं जिसने इसकी सृष्टि की या किसान की जो ईश्वरीय इच्छा के अनुसार इसका उपयोग करता है..... समाज की कोई व्यवस्था केवल सिद्धान्तों के आधार पर निर्दोष नहीं हो सकती, चाहे वे सिद्धान्त कितने ही उच्च और पवित्र हों। उनकी उन्नति मानव चरित्र के अधीन है।''*[114]

ज्ञानशंकर

ज्ञानशंकर ज़मींदार जटाशंकर का छोटा पुत्र है। ''वह अपने वर्ग का प्रतिनिधि पात्र है। वह जितना धूर्त है, उतना चतुर नहीं। इसलिए उसकी बहुत कम योजनाएँ सफल हो पाती हैं। वह जितना धन का लोभी है, उतना ही कामी भी। इसलिए उसकी कामुकता कभी–कभी उसका बना–बनाया खेल बिगाड़ देती है। वह अपना काम बनाने के लिए दुःसाहस कर सकता है; लेकिन वह दूसरों का चरित्र

समझने में असमर्थ है। इसलिए उसे दूसरों से अपनी निंदा सुननी पड़ती है। वह कपटी, छली, और दग़ाबाज है, लेकिन उसमें हिम्मत चोरों के बराबर भी नहीं है। उसकी कायरता पाठक की सहानुभूति दूर कर देती है। वह जितना कायर है, उतना ही कठोर और निर्दयी भी है। वह लखनपुर के किसानों का मुख्य प्रतिद्वंद्वी है लेकिन उनके सामने वह अपने पैरों खड़ा नहीं होता। उसे कानून और पुलिस की बैसाखियों में खड़ा रखने वाली ताक़त अंग्रेज़ी राज की है।''[115] उसके व्यक्तित्व का सबसे प्रमुख तत्त्व उसका स्वार्थ है। जघन्य से जघन्यतम स्वार्थ। स्वार्थ–सिद्धि के लिए तरह–तरह का ढोंग रचता है और उदात्त–मूल्यों की बातें करता है।

एक दिन जब वह पैरगाड़ी से निकलते हैं, सड़कों पर इतना कीचड़ था कि पैरगाड़ी मुश्किल से निकल सकी, छीटों से कपड़े खराब हो गये। उन्हें म्युनिसिपैलटी के सदस्यों पर क्रोध आ रहा था। कहते हैं– 'वोटरों को अधिकार होना चाहिए कि जब किसी सदस्य को जी चुराते देखें तो उसे पदच्युत कर दें। यह मिथ्या है कि उस दशा में कोई कर्त्तव्यपरायण मनुष्य मेम्बरी के लिए खड़ा न होगा। जिन्हें राष्ट्रीय उन्नति की धुन है, वह प्रत्येक अवस्था में जाति–सेवा के लिए तैयार रहेंगे। मेरे विचार में जो लोग सच्चे अनुराग से काम करना चाहते हैं वह इस सम्बन्ध से और भी खुश होंगे। इससे उन्हें अपनी अकर्मण्यता से बचने का एक साधन मिल जायेगा और यदि हमें जाति–सेवा का अनुराग नहीं तो म्युनिसिपल हाल में बैठने की तृष्णा क्यों हो? क्या इससे इज्जत होती है? सिपाही बनकर कोई लड़ने से जी चुराये, यह उसकी कीर्ति नहीं अपमान है।''[116]

ज्ञानशंकर, दयाशंकर के अभियोग के संदर्भ में ज्वाला सिंह (डिप्टी साहब, ज्ञानशंकर का मित्र) से कहता है– ''मैं ऐसा धृष्ट नहीं हूँ कि मित्रता से अनुचित लाभ उठाकर न्याय का बाधक बनूँ। मैं कुमार्ग का पक्ष कदापि न ग्रहण करूँगा, चाहे मेरे पुत्र के ही सम्बन्ध में क्यों न हो। मैं मनुष्यत्व को भ्रातृ–प्रेम से उच्चतर समझता हूँ। मैं उन आदमियों में हूँ कि यदि ऐसी दशा में आपको सहृदयता की ओर झुका हुआ देखूँ तो आपको उससे बाज रक्खूँ।''[117] .....'मगर यह कहने में भी

मुझे संकोच नहीं है कि भ्रातृ–स्नेह की अपेक्षा मेरी दृष्टि में राष्ट्र–हित का महत्व कहीं अधिक है और जब इन दोनों में विरोध होगा तो मैं राष्ट्र–हित की ओर झुकूँगा।''[118]

''ज्ञानशंकर एक रूपवान, सौम्य मृदुमुख मनुष्य थे। गायत्री सरल भावों से इन गुणों पर मुग्ध थी।''[119] वह नाना प्रकार के स्वाँग करके गायत्री को अपने ओर आकर्षित कर लेता है। प्रेमचंद कहते हैं– वह प्रेम नहीं वशीकरण था। गायत्री को अधिकार में लेकर उसकी ज़ायज़ाद पर कब्जा करना यही उसका उद्देश्य था। इसी वैभव–लालसा तथा स्वार्थ के वशीभूत होकर ज्ञानशंकर क्या नहीं करता? साले की मृत्यु का समाचार आता है, विद्या पछाड़ खाकर गिर पड़ती है, और उसको ''वह शोकमय व्यापार अपने सौभाग्य की ईश्वरदत्त व्यवस्था जान पड़ी।''[120] इसी स्वार्थ के कारण उसने गायत्री को भ्रष्ट किया। इसी के कारण उसने प्रभाशंकर आदि का अपमान किया। इसी के कारण प्रेमशंकर से छल–कपट आदि किये। इसी के कारण ज्वालासिंह को अखबारों में बदनाम किया। स्वार्थ और वैभव की यह लालसा कमलानन्द को जहर देने की जघन्य सीमा तक खींच लाई। उसकी समस्त ज़िंदगी स्वार्थ का महा–व्यापार है। रामविलास शर्मा कहते हैं– ''प्रेमचंद के उपन्यास–साहित्य में ज्ञानशंकर तमाम खल पात्रों का सिरमौर है।''[121]

शोषण पर आधारित सामाजिक व्यवस्था, बहुसंख्यक जनता को गरीब रखकर उनको भूखों ही नहीं मारती, वह पीड़ित व शोषित जनता को घीसू–माधव के स्तर पर पहुँचने के लिए मजबूर ही नहीं करती, बल्कि स्वयं शोषकों की मनुष्यता व व्यक्तित्व शील–गुण को भी नष्ट कर देती है। जैसे ज्ञानशंकर!

कर्मभूमि

'कर्मभूमि' उपन्यास 1932 में लिखा गया था। "'कर्मभूमि' हिन्दुस्तान के स्वाधीनता–आन्दोलन की गहराई और प्रसार का उपन्यास है। प्रेमचंद ने यह उपन्यास 'सविनय अवज्ञा आन्दोलन' के दिनों लिखा था। 'कर्मभूमि' हिन्दुस्तानी